# मंदिर निर्माण की नागर शैली

डॉ0 आंचल

सहायक आचार्य

इतिहास विभाग

कमला आर्य कन्या पी0 जी0 कॉलेज, मिर्जापुर

**सारांश –** भारत के लोगों के जीवन में धर्म व संस्कृति का सदियों से प्रमुख स्थान रहा है। इसी धर्म एवं संस्कृति के प्रचार व प्रसार के लिए लोगों ने ऐसी स्थाई वस्तुओं का निर्माण करने पर विचार किया जिससे कि भारतीय धर्म हमेशा – हमेशा के लिए अमर रहे। भारत में मंदिर इसी धर्म व संस्कृति का प्रतीक है जिन्हें प्राचीन ग्रंथो में देवकुल, देवग्रह आदि कहा गया है। मंदिरों के बनने के साथ–साथ इनके निर्माण की शैली में भी स्थानीय परिवर्तन होता रहा है। प्रस्तुत शोध पत्र में हम मंदिर निर्माण की नागर शैली के विषय में वर्णन करेंगे।

**प्रस्तावना –** भारतीय धर्म व संस्कृति जितनी प्राचीन है उतने ही प्राचीन व ऐतिहासिक भारत में मौजूद मंदिर हैं। जो कि आज के समय में प्रचलित विभिन्न शैलियों जैसे – नागर, द्रविड़ तथा बेसर में बने हुए हैं। इसमें उत्तर भारत में नागर शैली में विभिन्न मंदिरों का निर्माण हुआ। इन मंदिरों के निर्माण से भारतीय धर्म व संस्कृति के प्रचार – प्रसार के साथ–साथ ही भारतीय धर्म युग – युगांतर के लिए अमर हो गया। ये मंदिर न सिर्फ उपासना के लिए अपितु सामाजिक तथा आर्थिक प्रयोजन के लिए भी उपयोग में लायें जाते थे।

**बीज वाक्य –** मंदिर, नागर, स्थापत्य कला, शिखर, कलश, वर्गाकार आमलक, गर्भग्रह।

नागर शैली का प्रसार उत्तर भारत में हिमालय से लेकर विंध्य पर्वतमाला तक देखा जा सकता है इस शैली में मंदिरों का आकार आधार से लेकर सर्वोच्च अंश तक चतुष्कोणीय है इसमें गर्भग्रह, अंतराल, मण्डप, अर्धमण्डप आदि एक ही अक्ष पर एक दूसरे से संलग्न होते हैं।

शिल्पशास्त्र के अनुसार नागर शैली के आठ प्रमुख अंग हैं जो निम्नलिखित है –

' मूल आधार – जिस पर संपूर्ण भवन खड़ा किया जाता है।

' मसूरक – नीवं व दीवारों के बीच का भाग।

' जंघा – दीवारें।

' कपोत – कार्निस।

' शिखर – मंदिर का शीर्ष भाग।

' ग्रीवा – शिखर का ऊपरी भाग।

' वर्तुलाकर आमलक – शिखर के शीर्ष पर कलश के नीचे का भाग।

' कलश – शिखर का शीर्ष भाग।

नागर शैली के मंदिरों में योजना तथा ऊंचाई को मापदंड रखा गया है। इस शैली में वर्गाकार योजना के आरंभ होते ही दोनों कोनों पर कुछ उभरा हुआ भाग प्रकट हो जाता है जिसे ''अक्त'' कहते हैं। इसमें चांडी समतल छत से उठती हुई शिखा की प्रधानता पाई जाती है। यह शिखा कला उत्तर भारत में सातवीं शताब्दी के पश्चात विकसित हुई अर्थात् परमार शासकों ने वास्तुकला के क्षेत्र में नागर शैली को प्रधानता देते हुए मंदिर बनवायें।

सातवीं शताब्दी से लेकर 13वीं शताब्दी के मध्य तक ओड़िशा में नागर शैली के अंतर्गत एक विशिष्ट मंदिर शैली का विकास हुआ जिसे मंदिर स्थापत्य में ओड़िशा शैली के नाम से जाना जाता है।

सर्वप्रथम नागर शैली के मंदिरों का निर्माण गुप्त काल में शुरू हो गया था। इस वंश के सम्राटों के शासनकाल में नागर शैली में बहुत से मंदिर निर्मित कराए गए थे। इस काल में पाषाण तथा ईटों से बने मंदिरों की संख्या ज्यादा है। गुप्त काल के नागर शैली के मंदिरों की विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

– मंदिरों को एक ऊंचे चबूतरे पर स्थापित किया गया है।

– गर्भग्रह तक जाने के लिए सीढ़ियों का प्रयोग किया गया है।

– बाहरी भाग अर्थात् दीवारें सादी है।

– गर्भग्रह में देव प्रतिमा स्थापित है।

– द्वार के दोनों तरफ गंगा – यमुना की मूर्तियां है।

– गर्भग्रह के चारों तरफ प्रदक्षिणापथ है जो की छत से ढका हुआ है।

प्रारंभिक गुप्तकालीन मंदिरों में एक गर्भगृह तथा स्तंभों पर आधारित अर्धमंडप है। चारों तरफ मेहराब तथा प्रदक्षिणापथ है। प्रारंभिक मंदिरों में छतों पर शिखर का अभाव है अर्थात् छतें सपाट है। तिगुवा मंदिर तथा सांची के मंदिर प्रारंभिक गुप्तकालीन मंदिर हैं।

उत्तरगुप्तकालीन मंदिर ईटों के बने हुए हैं तथा छत के ऊपर शिखर बना हुआ है। मंदिरों का निर्माण पंचायतन योजना पर है तथा पूरा मंदिर अलंकरण प्रधान है। नचना कुठार का पार्वती मंदिर इसका उदाहरण है।

देवगढ़ का दशावतार विष्णु मंदिर बलुआ पत्थर से निर्मित है। इसके चारों कोनों पर लघु देवालय बने हुए हैं । अन्य मंदिरों में भीतरगांव का मंदिर, अपसढ़ मंदिर, मुंडेश्वरी मंदिर आदि हैं।

नागर शैली में गुप्तकालीन मंदिरों के पश्चात उड़ीसा के मंदिरों का स्थान है। जो कि अपनी सुंदरता में अनुपम है। उड़ीसा के अधिकांशतः मंदिर भुवनेश्वर, पुरी तथा कोणार्क में बने हुए हैं।

इस शैली का उद्भव कोणार्क में सातवीं सदी के मंदिरों से होता है। इन मंदिरों की विशेषताएं निम्नलिखित है।

– इस शैली के लगभग सभी मंदिरों के भीतरी भाग सादे हैं जबकि बाहरी भाग सुसज्जित है।

– मंदिर के चारों तरफ द्वार बने हैं तथा ऊंचे परकोटे से मंदिर घिरे हुए हैं।

– मंदिरों में दीवारें तीन खंडो में बटी है तथा प्रत्येक खंड को रथ कहा जाता है।

– भुवनेश्वर का लिंगराज मंदिर चारों तरफ से ऊंची चहारदीवारी दीवारीं से घिरा हुआ है। देवल, जगमोहन नटमंडप, भोगमंडप आदि इस मंदिर में बने हुए हैं।

– जगन्नाथ मंदिर का निर्माण 1030 ईस्वी में चोडगंग ने कराया था। इसका प्रांगण आयताकार है। इसमें जगन्नाथ,सुभद्रा तथा बलराम की विशाल मूर्तियां है एवं इस मंदिर का शिखर 200 फीट ऊंचा है।

– उड़ीसा का कोणार्क मंदिर सूर्य देव को समर्पित है। इसका निर्माण गंग शासक नरसिंह देव ने कराया था।इसमें सात अश्वों को रथ को खींचते हुए दिखाया गया है। इस मंदिर का प्रत्येक अंग बेल – बूटे देवी – देवताओं तथा काल्पनिक पशुओं की मूर्ति से सुसज्जित है।

उड़ीसा के अन्य मंदिरों में परशुरामेश्वर मंदिर, मुक्तेश्वर मंदिर, केदारेश्वर मंदिर, वैताल देवल मंदिर आदि है।

नागर शैली में ही चंदेल राजाओं ने बहुत से मंदिरों का निर्माण कराया। इनमें खजुराहो के मंदिर प्रसिद्ध है उनकी विशेषताएं निम्नलिखित है।

– इन मंदिरों की अधिकतम ऊंचाई 100 फिट है।

– ये मंदिर चहारदीवारी से नहीं घिरे है एवं ना ही इनमें आंगन उपस्थित है।

– यह मंदिर पंचायतन आकार में बने हैं जिसमें मुख्य मंदिर के चारों कोनों पर छोटे–छोटे देवालय बनाए जाते हैं तथा मुख्य देवता के उप – देवताओं की मूर्तियां इनमें स्थापित की जाती है।

– खजुराहो के मंदिरों में उरूश्रृंगो की प्रधानता है इन्हें अंगशिखर भी कहते हैं।

– खजुराहो मंदिर के स्तंभों के शीर्ष मेहराब तथा छत का अंत पटल अलंकृत है।

– खजुराहो के मंदिर अंदर व बाहर दोनों तरफ से सुसज्जित हैं।

खजुराहो के मंदिरों में सबसे श्रेष्ठ मंदिर कंदारिया महादेव मंदिर है। यह मंदिर लगभग 116 फीट ऊंचा है। मंदिर में अंतराल, अर्धमंडप, गर्भगृह तथा प्रदक्षिणापथ बने हुए हैं एवं शिखर पर आमलक सुशोभित है। इस मंदिर में दो प्रवेश द्वार हैं तथा उनकी चौखटों पर मेहराब बने हुए हैं। खजुराहो का ये कंदारिया महादेव मंदिर पंचायतन योजना में बना है। मंदिर में श्रृंगारिक मूर्तियों की प्रधानता है।

खजुराहो का चौसठ योगिनी मंदिर एक विष्णु मंदिर है जो की चट्टान पर निर्मित है। इस मंदिर की दीवारों में 64 कोठरियां बनी है तथा हर एक कोठरी की छत ऊपर की तरफ जाकर शिखर में बदल गई है साथ ही प्रत्येक कक्ष में एक योगिनी की मूर्ति स्थापित है जिस कारण इसे 64 योगिनी मंदिर कहा जाता है। यहां के अन्य विष्णु मंदिरों में वामन मंदिर, चतुर्भुज मंदिर तथा वराह मंदिर आदि है।

खजुराहो के जैन मंदिरों में जिननाथ मंदिर, घंटई मंदिर तथा पार्श्वनाथ मंदिर है। जैन मंदिरों में यक्ष व यक्षणियों की मूर्तियां महत्वपूर्ण है। क्योंकि यक्षिणी सांसारिक वासना को दिखाती है तथा यह वासना मानव की निर्बलता को। इसी कारण इन मूर्तियों में यक्षिणी के पैरों से वामन दब गया है तथा सांसारिक मोह माया में फंस गया है। लेकिन जब वह सांसारिक बंधनों को तोड़कर ईश्वर को याद करता है तभी उसे आध्यात्मिक की प्राप्ति होती है और यही इन मूर्तियों की रचनाओं का उद्देश्य है।

जैन मंदिरों के अतिरिक्त खजुराहों में शैव तथा वैष्णव मंदिर भी निर्मित है। तथा स्थापत्य कला में यह अपना अलग महत्व रखते हैं। इन सभी के अलावा अन्य स्थानों पर भी नागर शैली में मंदिरों का निर्माण

हुआ। जिसमें मध्य प्रदेश के ग्वालियर में स्थित तेली का मंदिर है इस मंदिर के गर्भगृह में मातृका की मूर्ति स्थापित है साथ ही एक प्रवेशद्वार व स्तंभों पर टिका हुआ एक ऊंचा छज्जा भी बना है।

पश्चिमी भारत में 11वीं शताब्दी में निर्मित मोढेरा का सूर्य मंदिर प्रसिद्ध है। जिसका निर्माण सोलंकी नरेश भीम प्रथम के समय में शुरू हुआ था।

इसके अलावा कश्मीर का प्रसिद्ध मार्तंड मंदिर स्थानीय तत्वों के साथ नागर शैली का ही प्रतिनिधित्व करता है।

गुजरात के काठियावाड़ का प्रसिद्ध सोमनाथ मंदिर भी नागर शैली का प्रतिनिधित्व करता है। इसकी योजना वर्गाकार थी तथा इसमें भीतर का कक्ष आठपहलदार था।

सोमनाथ मंदिर के साथ ही बंगाल के दक्षिणी हिस्से तथा कश्मीर में भी कुछ मंदिरों का निर्माण किया गया जो कि स्थानीय तत्वों के साथ नागर शैली का ही प्रतिनिधित्व करते हैं।

इस प्रकार उत्तर भारत के साथ–साथ पश्चिमी तथा पूर्वी भारत के हिस्सों में भी नागर शैली का प्रभाव दिखाई देता है  उपर्युक्त वर्णित मंदिरों के अतिरिक्त अन्य बहुत सारे मंदिर हैं जो कि नागर शैली में निर्मित है। प्राचीन समय से ही मंदिरों का भारत में सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक महत्व रहा है तथा इनसे भारतीय संस्कृति के दर्शन भी होते हैं क्योंकि ये मंदिर भारतीय संस्कृति के वाहक है।

## संदर्भ ग्रंथ सूची –

– कृष्णदत्त वाजपेयी : भारतीय वास्तु कला का इतिहास, प्रथम संस्करण, 1972 ।

– कृष्णदेव : उत्तर भारत के मंदिर, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, 2016।

– डॉ० सच्चिदानंद सहायः मंदिर स्थापत्य का इतिहास, बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1989।

– डॉ० वासुदेव उपाध्यायः भारतीय स्तूप, गुहा एवं मंदिर, प्रथम संस्करण, 1972।

– मीनाक्षी कासीवाल भारती : भारतीय मूर्तिशिल्प एवं स्थापत्य कला, जयपुर।

– सावंलिया बिहारी लाल वर्मा : भारत में प्रतीक पूजा का आरंभ और विकास, हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना, 1974।